International Journal of Sanskrit Research 2018; 4(2): 32-33

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2018; 4(2): 32-33
© 2018 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 22-01-2018
Accepted: 26-02-2018

गुलशन कुमारी
शोधच्छात्रा, संस्कृत विभाग,
जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू कश्मीर,
भारत।

Correspondence
गुलशन कुमारी
शोधच्छात्रा, संस्कृत विभाग,
जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू कश्मीर,
भारत।

वेदाध्ययन में व्याकरण का योगदान

गुलशन कुमारी

प्रस्तावना

वेद के षडङ्गों में व्याकरण को वेदरूपी पुरुष का मुख कहा गया है।[1] जिस प्रकार शरीर के अवयवों में मुख अग्रगण्य है और मुख के बिना भोजनादि न होने से शरीर की पुष्टि नहीं हो सकती, उसी प्रकार व्याकरण के बिना वेद रूपी पुरुष के शरीर की रक्षा असम्भव है। यही कारण है कि व्याकरण षड वेदाङ्गों में मुख्य है।

व्याकरणशास्त्र अतिगूढ़ वेदमन्त्रों के अर्थ व्यक्त करने की कुञ्जी है और दूसरी ओर ऐसा कवच भी है, जिससे वेदमन्त्र सुरक्षित रह सकें। इसी कारण वाक्यपदीयकार भर्तृहरि व्याकरणशास्त्र को षड वेदाङ्गों में महत्त्वपूर्ण स्वीकार करते हुए कहते हैं व्याकरण ब्रह्मा के समीप, तपों में सर्वोत्तम तप तथा वेदाङ्गों में प्रथम है।[2] व्याकरण ही शब्दज्ञान का सरल एवं सीधा उपाय है।[3] शब्दों का तत्त्वज्ञान व्याकरण से ही सम्भव है।[4] व्याकरण का मुख्य प्रयोजन शब्द व्युत्पत्ति है। शब्दों की व्युत्पत्ति के उद्देश्य एवं अनके अर्थ निर्धारण की दृष्टि से ही इसकी रचना हुई है। सामान्यतः व्याकरण का विषय शब्द ही है, किन्तु अर्थ के बिना शब्द का होना सम्भव नहीं है। अतः शब्द व्युत्पत्ति के साथ–साथ अर्थ चिन्तन भी व्याकरण का विषय है। व्याकरण से निष्पन्न शब्द किस अर्थ में साधु है और किस अर्थ में असाधु, इसका निर्णय भी व्याकरण ही करता है। जैसे घोड़े के अर्थ में अश्व शब्द साधु है, अस्व शब्द असाधु है, यह उचित है, पर निर्धन अर्थ में अस्व शब्द भी साधु है। इस प्रकार शब्द साधुत्व का विचार अर्थ चिन्तन से भी निश्चित रूप से जुड़ा हुआ है। अतः व्याकरण शास्त्र केवल शब्द शास्त्र ही नहीं है, प्रत्युत शब्दार्थ सम्बन्ध का प्रतिपादक शास्त्र भी है, क्योंकि यह वेद के स्वरूप के साथ–साथ उसके अर्थ निर्धारण में भी उपयोगी है।

इस प्रकार व्याकरण का साक्षात् सम्बन्ध वेद से है। अन्य वेदाङ्ग वेद के उपकारक हैं, किन्तु व्याकरण को वेद के स्वरूप की रक्षा करने के कारण अत्यन्त उपकारक होने के कारण ही प्रमुख वेदाङ्ग माना गया है। अतः भाष्यकार पत०जलि वेदाङ्गों में व्याकरण को प्रधान स्वीकार करते हैं।[5] व्याकरण के अध्ययन का प्रधान लक्ष्य वेदों की रक्षा करना है। व्याकरण में वर्ण समाम्नाय, पद एवं स्वरों के उच्चारण के नियम एवं पदपाठ, क्रमपाठ आदि की कल्पना वेदों की रक्षा के लिए ही की गई है। इस प्रकार व्याकरण का साक्षात् सम्बन्ध वेद से है।

रक्षा – वेदों की रक्षा के लिए व्याकरण ही वह माध्यम है जिसके द्वारा हम वेदों की रक्षा कर सकते है। वैदिक मन्त्रों के शुद्ध उच्चारण हेतु वेदों की रक्षा करने के उद्देश्य से व्याकरण के अध्ययन की नितान्त उपयोगिता है। वैदिक मन्त्रों का हम अशुद्ध प्रयोग न कर सकें इस हेतु व्याकरण ही सहायता करता हैं। रक्षा के अन्तर्गत वैदिक मन्त्रों में यथानुसार वर्णों का लोप करना, किसी नवीन वर्ण का आगमन, वर्ण–विकार, उदात्त, अनुदात्त एवं स्वरित स्वरों का ज्ञान प्राप्त होता है। व्याकरण के अभाव में हम यथायुक्त स्थान पर उदात्तादि स्वरों का प्रयोग करने में समर्थ नहीं हो सकते। केवल व्याकरण को जानने वाला ही लोप, आगम, वर्ण–विकार इत्यादि से वेदों की रक्षा करके उनका सम्यग् रूप से पालन कर सकता है। जैसे लौकिक संस्कृत में पद है – 'अदुहत'। इस पद में 'दुह्' धातु है। यह पद लङ्लकार के प्रथम पुरुष के बहुवचन में प्रयुक्त हुआ है। जिसका अर्थ है दोहन किया किन्तु वैदिक संस्कृत में 'त' का लोप होकर तथा 'रुट्' का आगम करने पर 'अहुह्न' रूप सिद्ध होता है। अदुहत तथा अहुह्न दोनों पदों का अर्थ एक है और दोनों ही पद शुद्ध हैं इन सबका ज्ञान व्याकरण से ही प्राप्त होता है। लोप, आगम तथा वर्ण विकार से सम्बन्धित अन्य उदाहरण इस प्रकार है।

ऋग्वेद का मन्त्र है ''यो नः पिता जनिता''।[6]

वेद के इस मन्त्र में 'जनिता' निपातन से सिद्ध माना गया है। यहाँ जन् धातु में इट् के साथ तृच् लगने पर णिच् प्रत्यय का लोप हो जाता है। [7] जन् + णिच् + इट् + तृच् में णिच् का लोप होकर जन् + इट् + तृच् = जनितृ, प्रथमा एकवचन में 'जनिता' शब्द बनता है। लोक में णिच् का लोप नहीं होता। जन् + इ + इट् + तृ = जनि। जन् + इट् + तृच् = जन अय् + इ + तृ = जनयितृ बना जबकि प्रथमा के एकवचन में जनयिता बना। इसी प्रकार यज्ञ का विषय होने पर 'शमिता' शब्द भी उपर्युक्त विधि से निपातित होता है। [8] शम् + णिच् + इट् + तृच् णि लोप होकर पूर्ववत शमितृ बना और प्रथमा के एकवचन में 'शमिता' शब्द बनता है।

वेद में कवि, अध्वर और पृतना शब्दों के बाद में क्यच् प्रत्यय लगने से अन्तिम वर्ण का लोप हो जाता है। [9] कवि + क्यच्। इ का लोप होने पर 'कव्यति' बना। लोट् लकार मध्यपुरुष बहुवचन में 'कव्यत'। कव्यत + आयोः = कव्यतायोः [10] बनता है। इसी प्रकार अध्वर + क्यच् + उ = अध्वर्युः [11] रूप बनता है। पृतना क्यच् + उ = पृतन्युम् रूप बनता है।

आगम – वैदिक शब्दों के सम्यक् परिज्ञान हेतु आगम से सम्बन्धित कुछ अन्य उदाहरण –

ऋग्वेद में देवासः, ब्राह्मणासः जैसे अनेक पदों का प्रयोग किया गया है इसमें देवासः में 'आज्जसेरसुक्' पाणिनीय [12] सूत्र से अकारान्त शब्द के बाद बहुवचन में लगने वाले जस् प्रत्यय को असुक् का आगम होता है। जैसे देव + जस् + असुक् = देव + अस् + अस् = देवासः[13] इसी प्रकार ब्राह्मण + अस् + अस् = ब्राह्मणासः [14] सिद्ध होता है।

वेद में दिव सुपर्णा गत्वाय मन्त्रांश है। इस गत्वाय शब्द में 'क्त्वो यक्'[15] सूत्र से वेद में क्त्वा प्रत्यय को यक् का आगम होता है। जैसे गम् + क्त्वा + यक् = गत्वाय बनता है।

'श्री ग्रामण्योश्छन्दसि[16] पाणिनीय सूत्र से श्री और ग्रामणी शब्दों से वेद में आम् (षष्ठी बहुवचन) लगने पर नुट् का आगम होता है। जैसे श्री + नुट् आम् = 'श्रीणाम्' [17] रूप बनता हैं उसी प्रकार ग्रामणी + नुट् आम् = 'ग्रामणीनाम्' रूप सिद्ध होता है।

'गोः पदान्ते'[18] सूत्र से वैदिक चरण के अन्त में गोशब्द के षष्ठी बहुवचन की विभक्ति आम् को नुट् का आगम होता है। जैसे गो + नुट् आम् = गोनाम्[19] रूप बनता है।

वर्ण विकार – 'जश्शसोः शिः'[20] सूत्र अनुसार नपुंसकलिङ्ग में जस् और शस् प्रत्यय को 'शि आदेश होता है। 'शि' होने पर ''नपुंसकस्य झलचः''[21] सूत्र अनुसार नुमागम होता है। जैसे कुण्ड + जस् = कुण्डानि।

इसी प्रकार 'ऊतये'[22] शब्द में 'अव रक्षणे' धातु से क्तिन् प्रत्यय से अव् + ति रूप बना। ज्वर–त्वर–स्त्रिव्यवि–मवामुपधायाश्चँ [23] सूत्र से व और उपधा को ऊठ आदेश होकर 'ऊति' रूप बनता है। चतुर्थी विभक्ति के एकवचन में ऊतये रूप बनता है।

'अतो भिस् ऐस्'[24] सूत्र अनुसार संस्कृत में अकारान्त अङ्ग के बाद भिस् को ऐस् आदेश हेाता है। जैसे अग्निर्देवेभिः शब्द में देव + भिस् (ऐस्) = देवै रूप बना। किन्तु वेद में यह ऐस् 'बहुल' छन्दांसि'[25] सूत्र से बहुल रूप में होता है, जहाँ होना चाहिए वहाँ नहीं भी होता है और नहीं होने के स्थान में भी ऐस् हो जाता है। देव + भिस् (ऐस् नहीं होकर) 'बहुवचने झल्येत्'[26] सूत्र से एकार होकर 'देवेभिः'[27] रूप बनता है।

यहाँ कुछ उदाहरण प्रस्तुतः किए गये हैं। समस्त वेद, समस्त मन्त्र, मन्त्रों के एक एक पद और ँ अनुस्वार, हलन्त आदि प्रत्येक प्रकार के ज्ञान व विवेचन के लिए व्याकरण एक कुञ्जी है।

वस्तुतः वेद के समस्त पदों की निष्पत्ति, सिद्धि व स्वरूप ज्ञान व्याकरण के बिना कथमपि सम्भव नहीं है। व्याकरण शास्त्र के कारण ही वेदार्थज्ञान हो सकता है और इसी के कारण ही वेदार्थ की सुरक्षा सम्भव है। वेदार्थ की सुरक्षा पर ही वेद की रक्षा अवलम्बित है। सत्य कहा गया है – रक्षाथ वेदनामध्येयं व्याकरणम्।[28]

सन्दर्भ–ग्रन्थ

1. मुखं व्याकरणं स्मृतम्। पा० शि० 52
2. आसन्नं ब्रह्मणस्तस्य तपसामुत्तमं तपः।
   प्रथमं छन्दसामङ्ग प्राहुर्त्याकरणं बुधाः।। वा० पद० 1ध्11
3. प्राप्तरूपं विभागाया यो वाचः परमो रसः।
   यत्तत्पुण्यतमं ज्योतिस्तस्य मार्गोयमा०जसः।। वा० पद० 1ध्12
4. अर्थप्रवृत्तितत्त्नां शब्दा एव निबन्धनम्।
   तत्त्वावबोधः शब्दानां नास्ति व्याकरणदृते।। वा० पद० 1ध्13
5. प्रधानं हि षट्सु अङ्गेषु व्याकरणम्। महाभाष्य, पस्पशाह्निक
6. ऋक्, 10/82/3
7. अष्टा०, 6/4/53
8. अष्टा०, 6/4/54
9. अष्टा०, 7/4/39
10. सपूर्वया निविदा कव्यतायोः। ऋक्, 1/96/2
11. अध्वर्यु वा मधुपाणिम्। ऋक्, 10/41/3
12. अष्टा०, 7/1/50
13. ऋक्०, 1/36/4
14. ऋक्०, 6/75/10
15. अष्टा०, 7/1/47
16. अष्टा०, 8ध्2ध्17
17. ऋक्०, 10/45/5
18. अष्टा०, 7/1/57
19. विद्या हि त्वा गोपतिं शूर गोनाम्। ऋक्० 10/47/1
20. अष्टा०, 7/1/20
21. अष्टा०, 7/1/72
22. ये चिद्धि त्वामृषयः पूर्व ऊतये जुहूरेऽवसे महि। ऋक्० 1ध्48ध्14
23. अष्टा०, 6/4/20
24. अष्टा०, 7/1/9
25. अष्टा०, 7/1/10
26. अष्टा०, 7/3/103
27. अग्निर्देवेभिः, ऋक्० 3/3/6
28. महाभाष्य पस्पशाह्निक